E-ISSN: 3048-6041 | Volume- 3, Issue- 3 | March 2026

कहानियों में आदिवासियों का जीवन संघर्ष 'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका के संदर्भ में

क्रिस्टीना तोपनो
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, तेजपुर विश्वविद्यालय, असम

शोध सार

कहानी कहने की परंपरा आदिवासियों में पुरखा से चली आ रही है। आदिवासी कहानी मौखिक रूप से समृद्ध है। आदिवासी भाषाओं में उपलब्ध कहानियों को इस पत्रिका में अनुवाद के माध्यम से भी व्यक्त किया गया। इन कहानियों में आदिवासियों के जीवन संघर्ष को देख सकते हैं। आदिवासी लोगों के जल जंगल जमीन की पीड़ा को बखूबी से समझ सकते हैं। 'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका ने हाशिये के लोगों को अपने पत्रिका में स्थान दिया है। इस पत्रिका में उल्लेखित कहानियों में राजस्थान, झारखंड, पूर्वोत्तर भारत के आदिवासियों तथा अन्य भागों के आदिवासियों के जीवन का चित्रण हुआ है। इस प्रकार देखें तो इन कहानियों में आदिवासी स्त्री, विस्थापनों, नक्सलवाद, अंधविश्वासों, जल जंगल जमीन के संघर्ष, दिकुओं के अत्याचारों और आदिवासियों की पीड़ाओं आदि को उल्लेखित किया गया है। इस पत्रिका में उल्लेखित कहानियों में शिशिर टुडु की कहानी 'नक्सली',विमल कुमार टोप्पो की 'रक्तदान', केदार प्रसाद मीणा की 'अवत-अवतड़ी', येशे दोर्जी थोंगची की 'आईना', वाल्टर भेंगरा की 'बेबसी' और 'लासा', डॉ कृष्ण चंद्र टुडु की 'अंतिम परीक्षा', गौर चंद्र मुर्मू की कहानी 'देवन' और कुंडलिका केदारी की कहानी 'बीवी आदिवासी साहब की' आदि है।

बीज शब्द - पत्रिका, कहानी, आदिवासी जीवन।

मूल आलेख

आदिवासी भारत के मूलनिवासी हैं परंतु उनके संबंध में लेखन बहुत कम हुआ है। 'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका का प्रारंभ से उद्देश्य था कि हाशिये की आवाज बनना। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए 'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका ने आदिवासियों से संबंधित अनेक स्तम्भ निकाले। यह पत्रिका 1986-87 के आस- पास प्रकाशित होती है। इस पत्रिका में आदिवासी कहानी सन् 2000 के बाद के अंकों में देखने को मिलता है। गंगा सहाय मीणा आदिवासी कहानियों के संबंध में कहते हैं-"आदिवासी का जीवन, उनकी संस्कृति, मूल्य, उनका आचार-व्यवहार, प्रकृति, सृष्टि, तथा अन्य जीवों के साथ उनका रिश्ता आदि मिलकर पूरा एक मुकम्मल आदिवासी संसार बनाने हैं जिसकी अभिव्यक्ति आदिवासी कहानियों में हुई है। दूसरा, बाहरी लोगों के साथ आदिवासियों के रिश्ते के संदर्भ आदिवासी कहानियों में भरे पड़े हैं। आदिवासी इलाकों में आए नौकरी करने आए पुलिस-प्रशासन से जुड़े कर्मचारियों व सत्ता शासन के लोगों के साथ आदिवासियों का द्वन्द्व कहानियों में खूब प्रकट हुआ है।"[1]

आदिवासी जमीन पर बाहरी लोगों द्वारा कब्जा किया जा रहा था। बाहरी व्यक्ति अपनी ताकतों का प्रयोग करके उन्हें उनके ही जमीन से बेदखल कर देते थे। अनेक जमींदार, महाजन आदिवासी इलाकों में बसे हुए हैं। ये आदिवासियों के जमीन पर कब्जा करते थे। इस पत्रिका में उल्लेखित कहानियों में शिशिर टुडु की 'नक्सली' कहानी में इसे देख

*Corresponding Author Email: topnochrishtina78@gmail.com
Published: 24 March 2026
DOI: https://doi.org/10.70558/SPIJSH.2026.v3.i3.45612
Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).

सकते हैं। इस कहानी में देखते हैं कि फागु के जमीन पर उस गाँव के महाजन ने मुकदमा कर दिया उसे मालूम था कि फागु मुकदमा नहीं जीत पायेगा जबकि उसके इस गाँव में आए हुए मात्र पाँच साल हुए थे। गांवों में बहुत सी विकास परियोजनाएं आती हैं लेकिन ये परियोजना गरीब लोगों तक नहीं पहुँचती है। आदिवासी लोगों के नाम से तो आती है परंतु दलाल, सरकारी कर्मचारी और नेता आदि हड़प कर जाते हैं। जिसे यहाँ हम देख सकते हैं। फागु कहता है-"साहब ! हमरा नाम फागु उरांव ! घर बीरपुर है। आपका करमचारी रामौतर हमको बोला था कि कुआं खोदने का पइसा देता है। इसके लिए सरकार हमसे कागज पर साइन भी करवाया और बोला था कि काम शुरू कराओ, पेमेन्ट हो जाएगा। हुजूर, हम बैल, बकरी बेचकर अपना पइसा से काम पूरा कर लिए, बाकी अभी तक रामौतर हमको पइसा नहीं दिया। बोलत था एक हप्ता में मिल जाएगा।"[2] जब फागु सच्चाई से अवगत होता है कि इसमें बीडीओ भी साम्मिल है, तो फागु ने बीडीओ का गर्दन पकड़ लिया। जिसके कारण उसे पुलिस द्वारा पकड़ लिया गया। दूसरे दिन अखबर में उसे नक्सली घोषित कर दिया गया-"बीरपुर के बीडीओ का अगुवा करने आए नक्सली को मौके पर तैनात पुलिस ने योजना बनाकर दबोचा। गिरफ्तार नक्सली से पूछताछ के क्रम में कई अहम सुराग मिलने के संकेत मिले हैं।"[3] इस प्रकार देखते हैं आदिवासी अपने हक के लिए, अपने जल जंगल जमीन बचाने के लिए सरकार के खिलाफ विद्रोह करता है, तो उसे नक्सली घोषित कर दिया जाता है। सेरिड़् छोरोल की कहानी 'अखरोट का दरख्त' कहानी में भी देख सकते हैं आदिवासियों का जल जंगल जमीन के प्रति उनके लगाव को। रास्ता निर्माण के लिए अखरोट के पेड़ को काट दिया जाता है। पदमा उस पेड़ को अपना भाई मानती थी। अखरोट के पेड़ को काटने के साथ ही पदमा की भी मृत्य हो जाती है।

वर्तमान समय में आरक्षण खत्म करनी की बात होती है। आरक्षण का लाभ पाना इतना आसान नहीं है जितना आसान सवर्ण जाति द्वारा समझ जाता है। आरक्षण का लाभ पाने के लिए प्रमाण पत्र की आवश्यकता होती है। इसे बनाने के लिए बहुत सी कठिनयों का समाना करना पड़ता है। इन प्रमाण पत्र को बनाने वाले दफ्तरों के अधिकांश कर्मचारी सवर्ण होते हैं। जिसके कारण आदिवासियों को बहुत परेशानी होती है। एक प्रमाण पत्र बनाने में कभी-कभी बहुत समय लग जाता है। आदिवासियों के साथ जाति के आधार पर भेद भाव किया जाता है और उन्हें कम अंक दिया जाता है जिससे की वह आगे ना बढ़ पाए। फिर भी दलित, आदिवासी इन लोगों के साथ बुरा नहीं करते हैं। जिसे विमल कुमार टोप्पो की 'रक्तदान' कहानी में दिखाया गया है यह कहानी सिमोन नामक अपाहिज आदिवासी युवक की कथा है। सिमोन को ट्राइबल सर्टिफिकेट बनाने के लिए बहुत मुश्किलों का सम्मना करना पड़ता है। जिसे यहाँ पर देख सकते हैं -"सिमोन के दोस्तों ने सही ही कहा था उसका काम शायद आज होने को नहीं है। वाकई अफसर बाबू बहुत घटिया है। अनग्रसर श्रेणी विभाग में सरकार दलित अफसरों को क्यों नहीं बहाल करती? हमारे दुख दर्द को ये क्या जानें ? ये तो दलितों से घृणा करते हैं। ये हमारी सेवा करने के लिए कुर्सी पर नहीं बैठे -सिर्फ तनख्वाह के लिए बैठे हैं, रुपये कमाने के लिए बस।"[4] सिमोन का सर्टिफिकेट बहुत समय बाद बना था। जिस अफसर ने उसके साथ गलत किया था। जब उसी अफसर की माँ को ब्लड की जरूरत होती है। वह भी ब्लड बैक से ब्लड लेने जाता है। वहाँ काम करने वाला सिमोन ही होता है वह उसके साथ ऐसा नहीं करता है। 'O' पॉजिटिव का ब्लड ग्रुप नहीं होने पर सिमोन अपना ब्लड दे देता है। सिमोन कोई भेदभाव नहीं करता है। जैसा अन्य लोग आदिवासी लोगों के साथ में करते हैं। उस अफसर की माँ की जान बच जाती है लेकिन उस अफसर के भाई ने सिमोन को मोटरसाइकिल से टक्कर मार दी जिससे सिमोन की मौत हो गई।

आदिवासी समाज में अंधविश्वास है। इसे नकारा नहीं जा सकता है परंतु इस को बढ़ाने में बाहरी लोगों का भी सहयोग है। जिनमें आदिवासी इलकों में बसे महाजन, सेठ, जमींदार भी हैं। अर्थात जिनके बच्चे नहीं हैं, विधवा है। उसे डायन घोषित किया जा सके जिससे गाँव के लोग उसे मार डाले या जमीन ज़्यादाद छोड़कर भाग जाएं। जिसपर ये लोग कब्जा कर सके। कभी-कभी इस सब में रिश्तेदार भी सम्मिल होते हैं। हम केदार प्रसाद मीणा की 'अवत-अवतड़ी'

कहानी में देखते हैं जिसे इन पंक्तियों द्वारा समझ सकते हैं-"मिलावट करने वाले सेठ-साहूकर तक यह कहना नहीं भूलते कि गाँव में कितनी डायन है और नई-नई डायन कौन बनी है ? सबसे खतरनाक कौन है, किसके पास सबसे ज्यादा काचा है? चाय की दुकान पर डायनों का जिक्र आते ही लोग डायनों को नई-पुरानी गलियों से काम चलने वाला, तो गाली पूरी होते ही बगल में मुंह कर पच् -से जोर से थूकते जैसे डायन पर ही थूक हो।"[5]

वर्तमान समय में समाज में गुंडे, बदमाश इतने भरे हुए हैं कि समाज में स्त्रियों का रहना मुश्किल हो गया है। जहां स्त्री देखी उसे छेड़ने लग जाते हैं। एक दिन में 100 से भी ज्यादा ऐसी घटना होती है। यह केवल गाँव में नहीं होता शहरों, दफ्तरों, स्कूलों और कॉलेज आदि जगहों में भी होता है। आए दिन इस कारण से अनेक स्त्रियाँ आत्मा हत्या कर रही हैं, मर रही है, शोषित हो रही हैं, तेजाब डाल कर उनके चेहरे को जला दिया जा रहा है। इसे येशे दोर्जी थोंगची की कहानी 'आईना' में देख सकते हैं। यह वांगडान नामक युवती की कथा है। मण्डाला गाँव में नए मास्टर के पास आईना था। किसी ने पहले गाँव में आईना नहीं देखा था। मास्टर साहब के पास गाँव के सभी लोग जाते है, इस अजीब वस्तु को देखने। लेदन ने भी आईना देखा और पूरे गाँव में बात फैला दी कि इस अजीब वस्तु में अपना प्रतिबिंब देख सकते हैं। लेदन वांगडान को भी सहनुभूति स्वर में कहती है - "तुम एक समय इस संसार की सबसे खूबसूरत लड़की थी लेकिन उस बदमाश छिम्बु ने तुम्हारे चेहरे के साथ क्या कर दिया था। जाओ और मास्टर बाबू के घर के उस दर्पण में खुद देखो, तुम्हें तुम्हारे प्रेमी (रोमियो) की निर्दयता के बारे में पता चलेगा।"[6] वह एक बहुत खूबसूरत युवती हुआ करती थी। छिम्बु नामक बदमाश युवक उसे पाना चाहता था। जब उसे पता चल जाता है कि वांगडान का विवाह वांगडान के चचेरे भाई के साथ तय हुआ है। तब उसने उस पर हमला कर दिया। छिम्बु वांगडान को पाने में असफल होता है, तो वह उसके चेहरे को चूल्हे में जला देता है। जब वांगडान आईना में अपने चेहरे को देखती है, तो वह सह नहीं पाती है और आत्मा हत्या कर लेती है। रोज केरकेटा की 'गंध' कहानी में भी देखते हैं कि एक गैर आदिवासी व्यक्ति बस में चढ़ने वाली आदिवासी लड़कियों को छेड़ता रहता है। जब वह जोसना नाम की लड़की को भी छेड़ता है। वह उसे कहता है-"करंज तेल, करंज तेल बसाती है।"[7] जोसना उस व्यक्ति को मुक्का मारती है। इस प्रकार हम देखते हैं आदिवासी स्त्रियाँ विद्रोही स्वभाव की भी होती हैं।

'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका में वाल्टर भेंगरा 'तरुण' की कहानियाँ भी प्रकाशित हुई हैं। इनकी कहानियाँ में'बेबसी' और 'लासा' प्रमुख है। अधिकांश आदिवासी गांवों में बूढ़े लोग ही दिखते हैं। गाँव के युवा रोजगार की तलाश में गाँव छोड़कर चले गये हैं। गाँव में बूढ़े मां बाप की रक्षा करने के लिए कोई भी नहीं है। 'बेबसी' कहानी फूलों नामक स्त्री के जीवन की कहानी है। इस कहानी में दिखाया गया है कि सबसे पहले उसके पति की मृत्य हो गई इसके उपरांत उसके बच्चे भी उस छोड़ कर चले जाते है। फूलों अकेली रह जाती है। जब उसके घर में लोग लूटने के लिए आते हैं तो उसकी सहायता करने के लिए कोई नहीं होता है।

बाहरी लोगों द्वारा आदिवासी स्त्रियों को बहला-फुसलाकर अपने चंगुल में फसया जाता है। उनकी मजबूरी का फाइदा उठाया जाता है। उन्हें मजबूर किया जाता है कि वे उनके लिए काम करें। इस प्रकार से अनेक आदिवासी लड़कियों को अपने चंगुल में फसाया जाता है और बेच दिया जाता है। इस दृष्टि से 'लासा' कहानी बहुत ही महत्वपूर्ण है। सरला की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। उसने विकास योजना के तहत सिलाई सीखा। इसके उपरांत देवेन्द्र जी ने उसे सिलाई मशीन और समय- समय पर पैसा देता था। जिससे उसकी आर्थिक स्थित ठीक हो गयी। किस प्रकार बाहरी लोग आदिवासियों की मजबूरी का फैयदा उठाते हैं। इसे यहाँ देख सकते हैं जो इस प्रकार है देवेन्द्र सरला को कहता है -"देखो सरला, हम बहुत मुश्किल में फस गए हैं। जो लोग संस्था को आर्थिक मदद देते हैं और जिन रुपयों से हम तुम्हारे जैसे लोगों की मदद करते हैं, उनकी भी कुछ मांगे कभी-कभी रहती हैं। हम उन्हें 'ना' नहीं कह सकते। दिल्ली में ऐसे ही कुछ साहब लोग हैं, जिन्हें उनके घरों में काम करने के लिए घरेलू किस्म की नौकरानियों की जरूरत है। तुम इस मामले में हमारी मदद कर सकती हो। तुम आस-पास के गाँव की लड़कियों को इस काम के

लिए राजी करो। पर इसकी गोपनीयता बनाए रखनी होगी। इसे भी सुनिश्चित करना होगा कि किसी तीसरे आदमी को इसकी भनक न लगे। तुम समझ रही हो ना मैं क्या कहना चाहता हूँ ?"[8] सरला उनकी आभार से लदी हुई थी। सरला ने तुलसी, फुलमनी और मरियम की एक बार मदद की थी, मिठाई की दुकान में। ये तीनों भी इनकी आभार से दब गयी थी। लेकिन उस वक्त सरला ने उन्हें कुछ नहीं कहा। लेकिन जब उसने दुबारा तुलसी को देखा, जो अपने घर के रोज- रोज मार पीट और पिता के दारू पीने से परेशान थी। जिसके कारण वह घर से निकाल गई थी। सरला को मालूम पड़ा तो वह उसे शहर ले गयी। देवेन्द्र जी के फंदे में, जिसे लेखक के शब्दों द्वारा समझ सकते हैं "सरला तुलसी को लेकर शहर जाने वाली आखिरी बस में चढ़ गई। शाम के धुंधलके में दोनों को किसी ने नहीं देखा। शिकारी को अपना शिकार मिल गया था। गाँव में चिड़ियों को फंसाने के लिए लोग, बांस की लंबी पतली तिल्लियों में फुटकल और बट पेड़ों से निकले गोंद के 'लासा' को सात कर जलस्रोतों के आस-पास गाड़ देते हैं। पक्षियों को ललचाने के लिए वे उन पर फतिंग और तितलियाँ चिपका देते हैं। 'लासा' तो देवेन्द्र बाबू ने बहुत पहले ही लगा रखा था। उस 'लसे' में पक्षियों को ललचाने के लिए सरला जैसी जरुरतमन्द महिलाओं को फतिंगों और तितलियों की तरह चिपका कर गाड़ दिया गया था। जिनकी ओट में तुलसी जैसी पक्षी चिपकते जा रहे थे। शिकारी खुश हो रहा था।"[9] इस प्रकार से ही अधिकांश आदिवासी लड़कियों को शहरों में ले जाते हैं। जिनमें अधिकांश लड़कियां झारखंड, बंगाल और असम की हैं। जहां उनका शारीरिक तथा अन्य शोषण होता है। वहाँ से बहुत कम लड़कियां वापस अपने घर आती हैं।

आदिवासियों के लिए जमीन बहुत महत्वपूर्ण हैं। आए दिन आदिवासी लोगों के जमीन पर गैर आदिवासियों द्वारा कब्जा हो रहा है। जमीन किसी से दुश्मनी और नफरत का कारण भी बन सकता है और स्नेह का कारण भी बन सकता है। गौर चंद्र मुर्मू की कहानी 'देवन' हैं। इस कहानी में देवन के पिता की मृत्य होने पर उसके बड़े पिताजी उसका ख्याल रखते हैं लेकिन उसकी बड़ी माँ उसको पसंद नहीं करती है। उसके साथ बुरा बर्ताव करती है जिसे देख कर बड़े पिताजी को अच्छा नहीं लगता है। फिर भी उसके बड़े पिता जी उसको पढ़ते हैं। लेकिन बड़े माँ इससे बहुत गुस्सा करती है। इसका कारण देवन का जमीन। देवन को नौकरी मिल जाती है। वह अपनी जमीन भी अपने बड़े पिता जी को दे देता है। इससे उसकी बड़ी माँ बहुत खुश होती है।

आदिवासी समुदाय में भेद भाव, छुआछूत जैसी कोई भावना नहीं थी परंतु बाहरी संस्कृति के प्रभाव इन पर भी पड़ने लगा है। वीर भारत तलवार कहते हैं-"आदिवासियों के ही बहुत-से गोत्र के लोग हरिजन बन गये, हालांकि आज भी उनके गोत्र वही हैं जो बाकी आदिवासियों के हैं। ऐसा क्यों हुआ ? क्योंकि उन्होंने नगाड़ा अपने हाथ से बनाया ऐसा ही कुछ और काम किया। सरदार भूमिज अपने ही संथाल भाइयों को अपने से नीच क्यों समझने लगे? क्योंकि सरदार भूमिजो ने ब्रह्मणवादी संस्कृति के प्रभाव में आकर कुछ ऐसी चीजें छोड़ दी, जिन्हें संथाल खाते रहे और खुद सरदार भूमिजो के पुरखे भी खाते थे। लेकिन इस आधार पर, खान-पान और नगाड़ा बाँधने जैसे श्रम के कार्यों के आधार पर जातिगत भेदभाव और छुआछूत क्यों पैदा हो गयी ? यह ब्रह्मणवाद है जो श्रम के कार्यों और खान-पान को रहस्यात्मक ढंग से पवित्र-अपवित्र बतलाकर, धर्म के नाम पर ऊँच-नीच के भेदभाव खड़ा करता है, छुआछूत का विधान करता है। लोग ब्रह्मणवाद के ऐसे मूर्खतापूर्ण, खतरनाक तथा जनतंत्र विरोधी आदेशों को 'हिंदू धर्म' समझ कर उसका पालन करते हैं।"[10] जिसे हम डॉ कृष्ण चंद्र टुडु की 'अंतिम परीक्षा' कहानी द्वारा समझ सकते हैं। डॉ मदन ने मायनों को आश्रय देने के लिए विवाह कर अपने घर ले गया। लेकिन मायनों बिना किसी रिश्ते के डॉ मदन के घर नहीं जाना चाहती थी इसलिए वह उसे से विवाह कर लेता है। विवाह के समय पुजारी के द्वारा गोत्र पूछने पर वह कहता है-" पुजारी जी, आप तो इस देवालय के पुजारी हैं। आप तो ब्राह्मण हैं। आपके पास तो धर्म-अधर्म की बात नहीं होनी चाहिए थी लेकिन आप हमसे जाति और गोत्र पूछ रहे हैं? यह कितने आश्चर्य की बात है। इस संसार में धर्म जाति के नाम पर और कितने दिन तक लड़ते-भिड़ते रहेंगे ?"[11] डॉ मदन जब घर जाता है और

उसकी माँ को मालूम होता है कि, मायनों 'गोंडवार' गोत्र की है, वह तो कहती है-"बेटा तुमने क्या किया। ये लोग तो 'गोंडवार' गोत्र के हैं, गोंडवार गोत्र से हमारे टुड्ड गोत्र का विवाह नहीं होता।"[12] डॉ मदन पूरे गाँव के समाने उसे अपनी पत्नी मानता है। इस प्रकार वह रूढ़ि प्रथा को तोड़ता है। बहुत से आदिवासी शहर में जाकर बस जाते है जो गाँव के लोगों को अनपढ़ और गंदे समझते हैं। उन पर बाहरी संस्कृति का प्रभाव पड़ता है। अपनी जड़ों को भूल जाते हैं। कुंडलिका केदारी की कहानी 'बीवी आदिवासी साहब की' है। इसमें फ्लैट संस्कृति को दिखाया गया है। सुनीता भी अपने सास-ससुर के गाँव से आने की बात सुनकर गुस्सा हो जाती है। ससुर द्वारा लाए गये मिठाई को वह अपनी बच्चे को खाने नहीं देती। सुनीता के बर्ताव को देखकर उसका ससुर दुखी होकर गाँव वापस चला जाता है। उसके जाते ही सुनीता सोफ़े तथा अन्य कपड़ों को धोने के लिए निकाल देती है। इसके आलाव आदिवासी कहानियों में लक्ष्मण गायकवाड़ की 'बन्दुक्या' रोज केरकेटा की 'बिरुवार गमछा, हरि उरांव की चार भाई, सरिता सिंह बड़ाईक की 'दावेदार', जोराम यालम नाबाम की 'दिलासा', बिजोया सवियान की 'लगड़पन' आदि कहानियाँ है। इन कहानियों में आदिवासियों के जीवन संघर्ष दृष्टिगोचर होता है।

निष्कर्ष

अतः 'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका में उल्लेखित कहानियों में आदिवासियों के जीवन को उकेरा गया है। आदिवासियों के लिए विकास के नाम पर अनेक योजनाएं आती हैं, लेकिन यह आदिवासियों, दलितों, जरूरतमंदों और गरीबों तक पहुँच नहीं पाती है। ये सब बातें फ़ाइलों में दबा दिए जाते हैं। इन सब पर जांच होनी चाहिए। दफ्तरों और कार्यालयों में उच्च पदों पर आदिवासी और दलितों की भी नियुक्ति होनी चाहिए जिससे वे भेदभाव, छुआछूत और शोषण के शिकार ना हो। आदिवासियों में शिक्षा का अभाव है जिसके कारण आदिवासी समाज में अंधविश्वास के कारण स्त्रियों को प्रताड़ित किया जाता है। इसे खत्म करने के लिए आदिवासियों को शिक्षित होना पढ़ेगा होगा। सरकार को स्त्रियों की सुरक्षा पर ध्यान देना चाहिए और इन गुंडे बदमाशों को कड़ी सज्जा देनी चाहिए। कानून को मजबूत बनाना चाहिए जिससे की ये लोग डरे। सरकार को आदिवासियों की आर्थिक स्थिति को सुधारने की आवश्यकता है राज्य सरकार भी रोजगार मुहैया कराए जिससे वह अपने राज्य में रहकर आत्मनिर्भर बने। जिससे कोई दलाल या बाहरी व्यक्ति आदिवासियों की मजबूरी का फाइदा ना उठा पाये। आदिवासियों को अपने संस्कृति को बाहरी संक्रमण से बचना चाहिए। इस प्रकार देखें तो 'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका में उल्लेखित कहानियों में आदिवासियों पर दिकुओं के अत्याचार, आदिवासी समाज में फैले अंधविश्वास, आदिवासी स्त्रियों के जीवन का चित्रण, आदिवासियों के पीड़ाओं, दुखों और संस्कृति के खतरे आदि को उद्घाटित किया गया है।

संदर्भ

1. मीणा, गंगा सहाय (2017). *आदिवासी चिंतन की भूमिका.* अनन्य प्रकाशन, पृ. 74
2. (सं) गुप्ता, रमणिका (2015). *युद्धरत आम आदमी.* वर्ष-3, पूर्णांक-27, पृ. 45
3. वही,
4. वही, पृ. 50
5. वही, *आज की कहानी विशेषांक-2.* वर्ष-4, अंक-36, अगस्त, 2016, पृ. 27
6. वही, *अखिल भारतीय आदिवासी,* वर्ष-3, पूर्णांक-80, दिसंबर-2005, पृ. 158
7. (सं) गुप्ता, रमणिका (2015). *युद्धरत आम आदमी पत्रिका.* वर्ष-03. अंक-25, अक्टूबर, पृ.21
8. (सं) गुप्ता, रमणिका (2015). युद्धरत *आम आदमी. वर्ष*-3, पूर्णांक-27,पृ. 31
9. वही, पृ.32

10. तलवार, वीर भारत (2008). *झारखंड के आदिवासियों के बीच एक एक्टिविस्ट के नोट्स.* भारतीय ज्ञानपीठ, प्रथम संस्करण, पृ.212
11. (सं) गुप्ता, रमणिका (2005). युद्धरत आम आदमी. *अखिल भारतीय आदिवासी*, पूर्णांक-80, दिसंबर, पृ.167
12. वही, पृ. 167